“बूंदों की संस्कृति” से साभार

स्पीतिः ग्लेशियर से पानी लाता है ‘कूल’

रोहन डिसूजा

हिमाचल प्रदेश का स्पीति इलाका ठंडी मरुभूमि है, फिर भी यहां के जीवन का मुख्य आधार खेती है। इसका श्रेय यहां सदियों से चली आ रही सिंचाई की एक सीधी-सादी प्रणाली को है जिससे ग्लेशियरों का पानी खेतों तक लाया जाता है। इस प्रणाली का ही चमत्कार है कि स्पीति की बंजर भूमि में फसलें लहलहाती हैं। लेकिन विकास की अदूरदर्शी नीतियों के कारण सिंचाई की यह अद्भुत प्रणाली और इसे टिकाऊ रखने वाली चेतना विनाश के कगार पर है।

स्पीति, लद्दाख और हिमाचल प्रदेश के मैदानी भाग को जोड़ने वाले मार्ग महत्वपूर्ण व्यापारिक पड़ाव है। स्पीति सब-डिवीजन के गांव 3,000 से 4,000 मीटर की ऊंचाई पर बसे हैं। साल में छह महीने ये गांव बर्फ से पटे रहते हैं। ऊंचे पहाड़ों से घिरे होने की वजह से बादल यहां तक नहीं पहुंच पाते, लिहाजा वर्षा नाम मात्र की होती है। मिट्टी सूखी है और उसमें पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं का अभाव है। इन विषम परिस्थितियों में भी मानवीय सूझबूझ ने स्पीति घाटी को आबाद बनाया है।

स्पीति में फसल का मौसम मई से अक्टूबर है। काली मिट्टी में गेहूं और बाकला, बलुई मिट्टी में हरा मटर और पीली मिट्टी में बाकला और जौ की खेती होती है। स्पीति में खेतीबाड़ी की एक खास बात यह है कि जमीन के छोटे से छोटे टुकड़े का भी इस्तेमाल किया जाता है। खेतों की मेंड़ और सड़कों के किनारों पर चारा उगाया जाता है। मानव मल का खाद के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। स्पीति के सभी दो मंजिला घरों में ऊपर की मंजिल पर शौचालय होता है और मल नीचे के कक्ष में इकट्ठा होता है। इस तरह बनी खाद को सर्दियों मे खेतों में डाला जाता है।

लेकिन स्पीति में खेती का सबसे महत्वपूर्ण पहलू कूल से सिंचाई है। इनके माध्यम से दूर स्थित ग्लेशियर का पानी गांवों तक पहुंचता है। ये जल मार्ग अक्सर काफी लंबे होते हैं और ऊबड़-खाबड़ पर्वतीय ढलानों और चट्टानी मार्गों से गुजरते हैं। कुछ कूल तो 10 किमी. लंबे और सदियों पुराने हैं।

"बूंदों की संस्कृति" से साभार

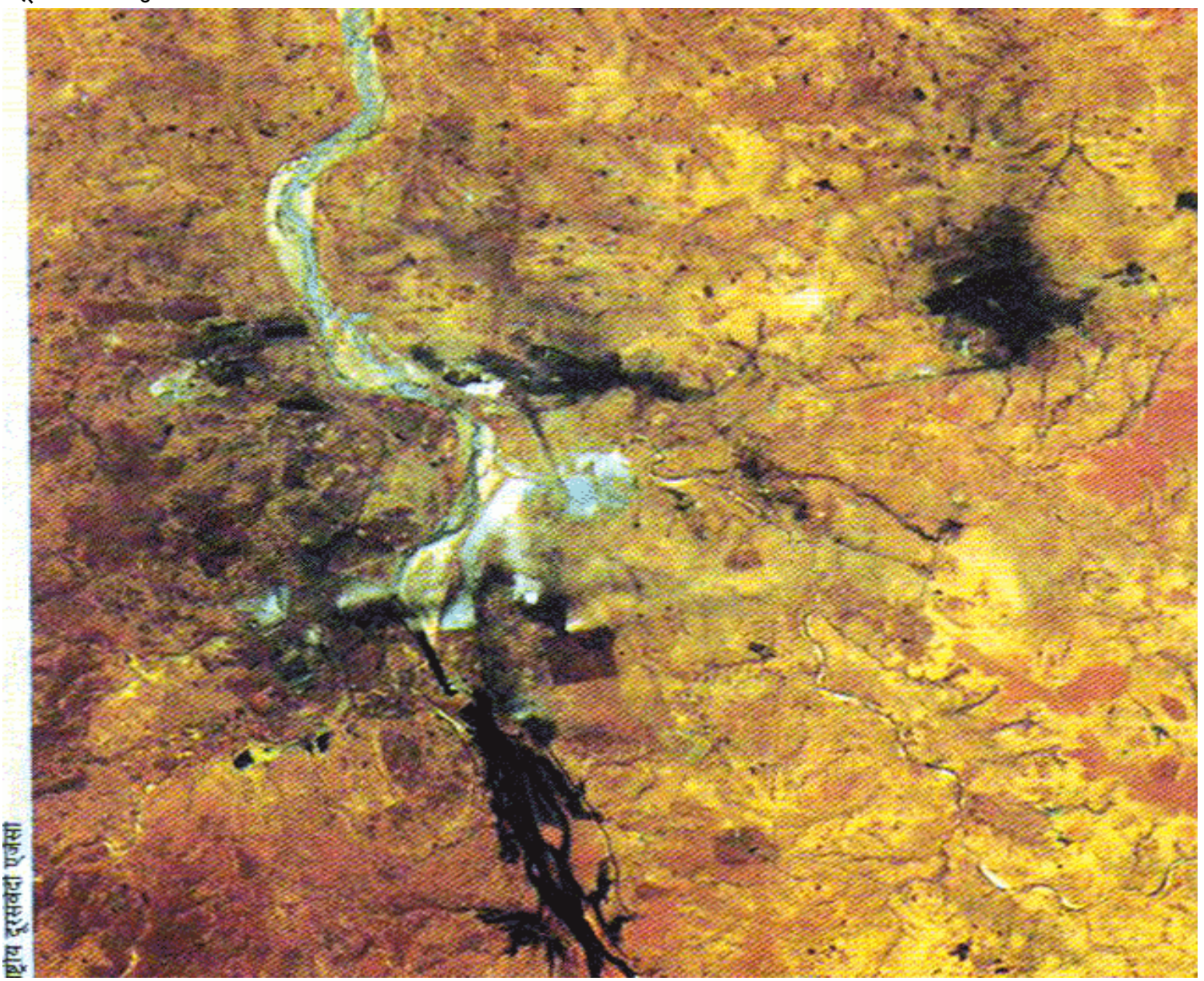

कूल लाहौल-स्पीति क्षेत्र में हैं और पत्थर भरकर इनका रास्ता बनाया गया है। कूल का यह चित्र उपग्रह से लिया गया है।

जल पर अधिकार

कूल का महत्वपूर्ण भाग ग्लेशियर का मुहाना है, जहां पानी जमा होता है। इस हिस्से को कूड़े-कचरे से साफ रखना जरूरी है। जल मार्ग को बंद होने से रोकने और रिसाव कम करने के लिए कूल के दोनों ओर पत्थरों की कतार बनाई जाती है। कूल से आने वाले पानी को गांव में गोल आकार के तालाब में इकट्ठा किया जाता है। सिंचाई की जरूरत होने पर थोड़ा-थोड़ा करके पानी निकाला जाता है। कूल से आने वाला पानी रात भर तालाब में इकट्ठा होता है और सुबह

“बूंदों की संस्कृति” से साभार

निकासी का मार्ग खोल दिया जाता है। शाम होने तक तालाब लगभग खाली हो जाता है और तब निकास मार्ग बंद कर दिया जाता है। यह क्रम रोज दोहराया जाता है।

इस प्रणाली के कारगर होने की वजह यह है कि स्पीति के लोग एक-दूसरे के सहयोग और साझेदारी से इसे चलाते हैं। यहां की कृषि योग्य भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने में संस्कृति का भी योगदान है। वैसे, सदियों से चली आ रही इस प्रणाली को सरकारी दखलंदाजी के कारण खतरा पैदा हो गया है।

पानी की कमी के कारण स्पीति में उत्तराधिकार कानूनों का स्वरूप ऐसा है ताकि खेतों का बंटवारा न हो। बड़े बेटे को विरासत में न सिर्फ जमीन और खेती के उपकरण, बल्कि घर और पानी के इस्तेमाल का अधिकार भी मिलता है। छोटे भाई-बहन या तो संयुक्त परिवार में काम करते हैं या फिर, जैसा कि आमतौर पर होता है, बौद्ध मठ में भिक्षु बन जाते हैं। इस तरह से यहां की आबादी भी नियंत्रित रहती है और खेतों पर जनसंख्या का दबाव नहीं पड़ता।

पानी पर घर के बड़े सदस्यों का ही अधिकार होता है। ये लोग गांव के संस्थापक के वंशज होते हैं। इस प्रणाली ने बड़ा घर का प्रभुत्व स्थापित करने के साथ ही स्थानीय सामाजिक क्रम परंपरा का निर्माण भी किया है। जिस परिवार के पास पानी का ज्यादा अधिकार होगा, उसके पास ज्यादा जमीन भी होगी। मिसाल के तौर पर, कजा गांव में 32 हेक्टेयर जमीन की सिंचाई करने वाले कूल के पानी पर 18 बड़े घरों का अधिकार है। कजा के बाकी परिवारों को बड़े घरों से पानी खरीदना पड़ता है। भुगतान आम तौर पर वस्तु के रूप में या मुफ्त मजदूरी करके होता है। कई बार पानी मुफ्त में भी दे दिया जाता है। पानी का लेन-देन विश्वास के आधार पर होता है। इसका लेखा-जोखा नहीं रखा जाता।

भरपूर हिमपात होने से पर्याप्त पानी मिलने की उम्मीद होती है। वैसी हालत में खुलकर पानी खर्च किया जाता है। लेकिन पानी की किल्लत होने पर पहले बड़े घर के सदस्य अपने खेतों की सिंचाई करते हैं और दूसरों के खेतों को पानी बाद में ही मिल पाता है। इससे फायदा यह होता है कि फसल कटाई के पूरे मौसम में मजदूर मिल जाते हैं। बड़े घरों की फसलें पहले तैयार हो जाती हैं और दूसरे परिवारों के लोग फसल काटने के लिए उपलब्ध रहते हैं। फसल तैयार होने के समय में फर्क की वजह से पूरी घाटी में एक ही समय मजदूरों की मांग में इजाफा नहीं होता। सामुदायिक श्रम को इस तरह मजबूत आधार मिलता है। इस वजह से किसान और मजदूरों के बीच-विवाद भी नहीं होता है।

"बूंदों की संस्कृति" से साभार

वैसे, कूल के पानी के बंटवारे को लेकर तनाव पैदा हो सकता है, क्योंकि पानी की कमी होने पर बड़े घर को कूल पर प्रभुत्व के कारण कम कठिनाई होती है। बाकी लोगों को अपनी बारी का इंतजार करना पड़ता है। इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि उन्हें पर्याप्त पानी मिल ही जाएगा।

बड़े घरों के बीच भी पानी के बंटवारे में असमानता हो सकती है। उनके बीच हिस्सेदारी तय करने का कोई पक्का आधार नहीं है और संभवतः कूल के निर्माण के समय ही अधिकारों का निर्धारण कर लिया गया था।

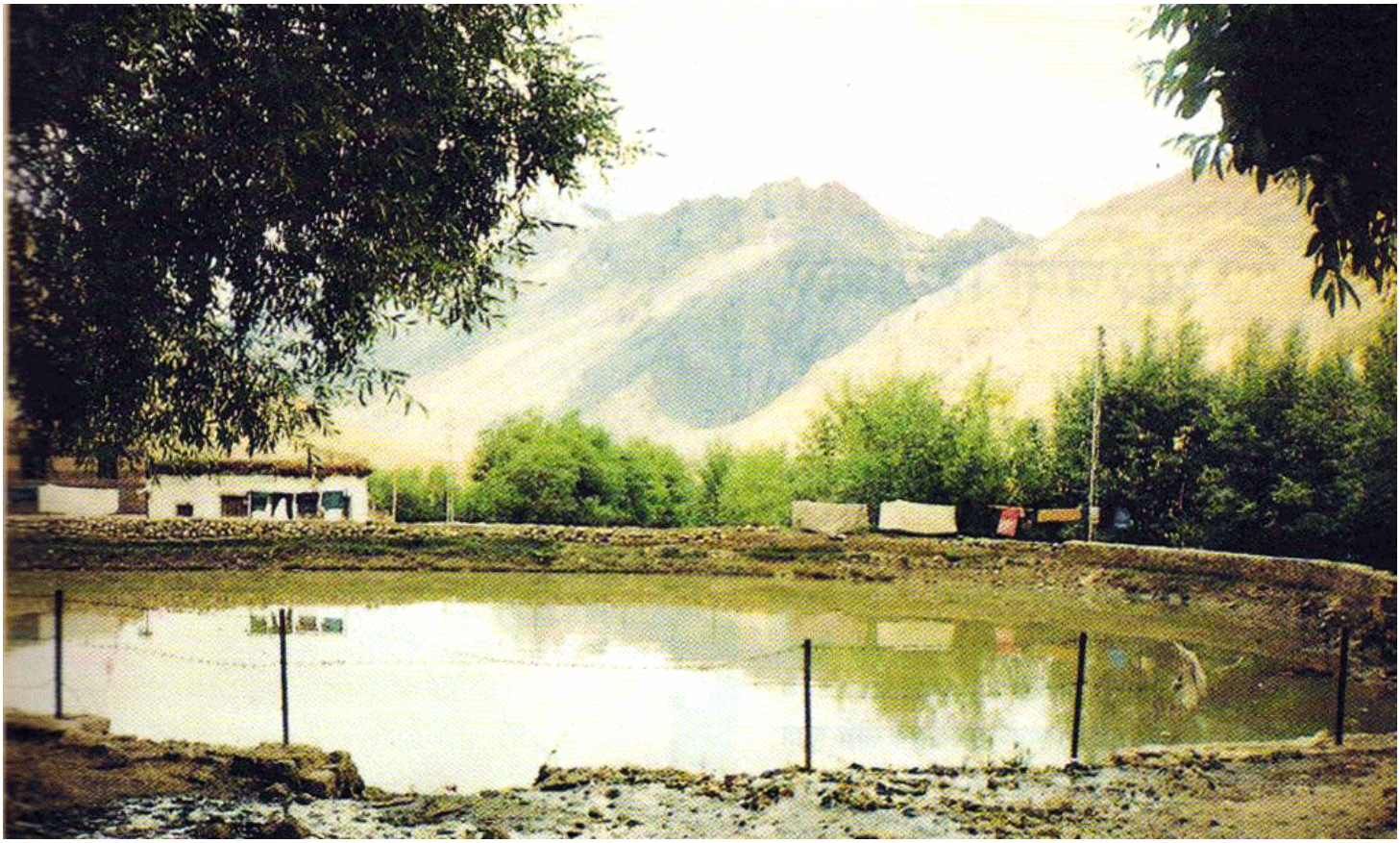

कूल का पानी गोलाकार तालाबों में जमा होता है, जैसा कि कजा गांव का यह तालाब है यहां से जरूरत के अनुसार पानी लिया जाता है।

कूल के पानी को मापने की इकाई एक दिन की आपूर्ति होती है। अप्रैल में बीज बोने से लेकर सितंबर में फसल कटने तक पानी की उपलब्धता करीब 70 दिन होती है। यदि किसी परिवार का कूल में हिस्सा 30 दिन का है और उसे सिर्फ 20 दिन पानी की जरूरत है तो बाकी पानी को वह बेच सकता है।

जरूरत के हिसाब से हर मौसम में पानी की हिस्सेदारी नए सिरे से तय होती है। लेकिन हिस्सेदारी की न तो खरीद-बिक्री होती है, न ही उसे किराए पर दिया जा सकता है। इस पाबंदी की वजह से बड़े घरों की प्रतिष्ठा बरकरार रहती है।

“बूंदों की संस्कृति” से साभार

नियंत्रण के नियम

पिछले 15 वर्षों में स्पीति घाटी में केंद्र सरकार ने खुद को आधुनिकीकरण के दूत के रूप में स्थापित करना शुरू किया है। केंद्र की गतिविधियों की वजह से यहां उत्पादन के पारंपरिक तरीकों और सामाजिक ढांचे में काफी बदलाव आया है। स्कूलों और अस्पतालों के खुलने से कई तरह की सरकारी नौकरियां मिलने लगी हैं और कृषि जीवन-यापन और रोजगार का एक मात्र साधन नहीं रहा।

सिंचाई विभाग ने कूलों का नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया है और तकनीक के स्तर पर कई नए काम हुए हैं। कूल के उद्गम को सीमेंट या कंक्रीट से पक्का बना दिया गया है और कुछ कूलों में रबर की पाइप लगा दी गई है। पुराने कूलों की मरम्मत की गई है और नए कूल बनाए गए हैं।

इस तरह के हस्तक्षेप और बाजार के बढ़ते दबाव, काम के सिलसिले में मजदूरों के बाहर जाने और रोजगार के दूसरे साधन उपलब्ध होने की वजह से कूलों के रखरखाव की पारंपरिक व्यवस्था तबाह हो गई है। पारंपरिक रूप से कूलों की मरम्मत सामुदायिक श्रम के जरिए होती थी और इसमें हर परिवार का योगदान होता था। लेकिन किब्बर, लोसर और समनाम गांवों के निवासियों की शिकायत है कि सिंचाई विभाग के हस्तक्षेप और श्रमिकों की कमी की वजह से पारंपरिक प्रणाली ध्वस्त हो गई है।

इसके अलावा सरकार द्वारा कूल के पानी के समान बंटवारे पर जोर देने से घाटी की परंपरागत समाज व्यवस्था को खतरा पैदा हो गया है। बड़े घरों का पानी और सामाजिक अनुक्रम में अपनी स्थिति पर से नियंत्रण टूटा है। लेकिन इसकी वजह से समता नहीं आई है, क्योंकि नई उभरती समाज व्यवस्था बाजार की ताकत और संपदा पर आधारित है। यानी कूल के पानी का बंटवारा उपलब्धता और जरूरत के आधार पर नहीं होगा और इस व्यवस्था पर पैसे की मार की वजह से स्पीति के कई परिवार कंगाल हो जाएंगे।